आतंकवाद को समझने के क्रम में

अरुण चतुर्वेदी

1970 के दशक में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद का प्रयोग विभिन्न राज्यों के अपने-अपने क्रांतिकारी एजेंडा को लागू किए जाने के लिए किया जा रहा था और तीसरी दुनिया के विशेषकर– लेटिन अमेरिका, अफ्रीका के कई राज्य यह प्रश्न भी उठा रहे थे कि आतंकवाद अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर असमानताओं को दूर करने के लिए और विभिन्न व्यवस्थाओं के दबावों को समाप्त करने के लिए किया जा रहा है और जब विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय मंच अंतर्राष्ट्रीय कानून का निर्माण करने में जुटे थे तब बहस का एक बड़ा हिस्सा इसी विचार में बंटा हुआ था और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने यह निर्णय किया कि आतंकवाद से लड़ने के लिए अंतर्राष्ट्रीय विधि के क्षेत्र को व्यापक किया जाए और यह भी निर्णय लिया कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उन अभावों और असमानताओं को दूर किया जाए जिसने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को तनावपूर्ण बनाया है।

1970 के दशक की बहस में यह बात भी बहुत स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आई थी कि लोग अपने लिए न्याय की मांग के लिए, राज्य पर दबाव बनाने के लिए, राजनयिक और अन्य नागरिकों को अपना निशाना बनाते हैं जिससे उन्हें अपने संघर्ष के प्रति विश्व का ध्यान आकर्षित करने का अवसर प्राप्त होता है। किंतु इस बीच यह प्रश्न भी उठाया गया कि जिन लोगों को वे अपना निशाना बना रहे हैं आवश्यक नहीं है कि वे इतने महत्वपूर्ण हों कि सरकार उनके लिए आतंकवादियों की बात सुन

ले। साथ ही साथ यह प्रश्न भी बार-बार उठाया गया कि सजग और जागरूक समूह अपने अधिकारों के लिए उन नागरिक समूहों के अधिकारों का हनन कर रहे है जो निर्दोष है, निरीह हैं। इन नागरिकों के अपने-अपने अधिकार हैं और उनके उल्लंघन का अधिकार किसी को नहीं है। पिछले दो दशक इन नियमों के निर्माण और प्रभावी होने के बीच गुजर गए, किंतु इसी काल खंड में आतंकवाद के स्वरूप और संचालन में पूरी तरह से स्थितियां बदल गई।

II

वर्तमान में आतंकवाद के दो स्वरूप तो नजर आ रहे है। एक आतंकवाद का वह रूप है जहां राज्य अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अपने ही विभिन्न नागरिक-समूह से संघर्षरत है। उसकी सेवाएं और राज्य सत्ता के सारे अंग इन समूहों को दबाने में व्यस्त है। राज्यों के आंतरिक संघर्ष में राज्य के सम्मिलित हो जाने से हिंसा का स्वरूप बदल जाता है और प्रतिस्पर्द्धा अधिक रक्त-रंजित हो जाती है। विकासशील देशों में यह प्रक्रिया बहुत ही सामान्य सी है क्योंकि राज्य की सत्ता न केवल कमजोर है वरन् उसे कई आंतरिक समूहों से भी संघर्षरत रहना होता है जिसके फलस्वरूप सामान्य राजनैतिक प्रक्रियाएं लगभग नहीं के बराबर है। इसमें राजनैतिक सहभागिता की जो कमी आती है उसके फलस्वरूप राज्य में रह रहे विभिन्न समूहों के बीच पारस्परिक संवाद समाप्त हो जाता है और उसका स्थान लगातार चलने वाली हिंसा ले लेती है। श्रीलंका में यह प्रक्रिया तमिल समूहों और वहां रह रहे विभिन्न समूहों के बीच लंबे समय से चल रही है। इस प्रक्रिया में राज्य का विरोध तमिल समूहों से है और यही कारण है कि श्रीलंका में आंतरिक हिंसा इतने व्यापक स्तर पर है।

आतंकवादियों का दूसरा समूह वह है जो अन्य राज्यों से दूसरे राज्यों में लगातार हिंसा को संचालित कर रहे है। इस वर्ग में पाकिस्तान को सम्मिलित किया जा सकता है। काश्मीर में हो रही लगातार हिंसा इसका ही परिणाम है। इस स्थिति का एक परिणाम यह भी है कि संघर्ष लंबे समय तक चलता है। लगातार जन हानि होती रहती है और कम कीमत पर तनाव और लंबे समय तक आंतरिक स्थितियों में हस्तक्षेप बने रहने की संभावना होती है। यह स्थिति पाकिस्तान द्वारा लगातार काश्मीर को लेकर बनी हुई है जिसके फलस्वरूप काश्मीर ही नहीं सारे भारत में तनावपूर्ण स्थितियां है। यह स्थिति 1990 के दशक से चल रही है। इतने लंबे तनाव को सहने की क्षमता सामान्यतः किसी देश में नहीं होती है और यदि वह अवरोध विकसित भी किया जाए तो उसकी कीमत वहां रह रहे जन सामान्य को ही देनी होती है। भारत-पाक इस तनाव के फलस्वरूप लगातार मानवीय संसाधनों के विकास में अभावों को झेल रहे हैं। दोनों देशों के सैनिक व्यय में लगातार वृद्धि हो रही है और जो संसाधन जनसुविधाओं के विकास में लगने चाहिए थे वे सैन्य तैयारियों में लग रहे है।

III

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद की घटनाओं के नए संदर्भ में 11 सितंबर, 2001 और 13 दिसंबर, 2001 की घटनाओं को समझना आवश्यक है। यह समझ दो कारणों से बहुत जरूरी है। पहली तो इसलिए कि 11 सितंबर वाली घटना ने जिसमें विश्व व्यापार केंद्र और पेनटागन पर हमला हुआ वह मूलतः अमेरिका के प्रतिष्ठा प्रतीक थे और अंतर्राष्ट्रीय प्रभुत्व के सभी मानकों के होते हुए भी यह आक्रमण इस बात को स्पष्ट करता है कि पूर्ण सुरक्षा का कोई अर्थ नहीं है। दूसरी, अमेरिकी प्रतिक्रिया थी जिसने आतंकवाद के प्रश्न पर अपनी प्राथमिकताओं को अंतर्राष्ट्रीय प्राथमिकता बना दिया और उसी के अनुरूप अंतर्राष्ट्रीय राजनय और नए समीकरणों का निर्माण किया। इस प्रसंग में अन्य देशों के साथ जो अमेरिका संबंध बने उसमें अमेरिकी हित ही प्रमुख निर्धारक थे और अन्य देशों की चिंताएं तो बहुत निचली प्राथमिकताओं पर थी। भारत के संदर्भ में यह घटना आतंकवाद के हमारे लंबे संघर्ष की याद तो थी ही, पाकिस्तान के साथ हमारे आतंकवादी इतिहास को व्यापक अंतर्राष्ट्रीय एजेंडा पर प्रस्तुत करना भी था। पाकिस्तान अपनी सामरिक स्थिति के कारण एक बार फिर आतंकवाद से लड़ रहे समूह की अग्रणी पंक्ति में था। अपने परंपरागत दृष्टिकोण में बदलाव के लिए भी पाकिस्तान इस राजनय में आगे ही रहा।

13 दिसंबर, 2001 को भारतीय संसद पर आतंकवादी हमला, हमारे लिए हमारी सत्ता के सर्वोच्च प्रतीक पर आक्रमण था। पाकिस्तान इस हिंसा में जुड़ा है—हमारे यहां यह अहसास होने में समय नहीं लगा। हमारे यहां पाकिस्तान के प्रति नाराजगी और एक उचित सैनिक कार्यवाही की मांग जनमत के स्तर पर हमेशा की तरह अत्यधिक मुखर थी, किंतु भारतीय नेतृत्व सारी घोषणाओं और सैन्य तैयारी के आभास के मध्य केवल राजनयिक दबाव बनाने में ही सफल रह पाया। सैन्य कार्यवाही का आभास और राजनयिक दबाव के लिए निरंतर दबाव—इन दो स्थितियों में ही हमारे विकल्प निहित हैं। राजनयिक दबाव अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के परिणाम है और सैन्य तैयारी का आभास आंतरिक राजनीति की अनिवार्यता।

आतंकवाद से जुड़े बहुत सारे प्रश्न तो हमारी अपनी आंतरिक राजनीति की आवश्यकताओं से जुड़े है। आतंकवाद से जुड़े सारे अंतर्राष्ट्रीय संदर्भों में यह याद रखना अनुचित नहीं है कि एक ओर अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में संस्कृतियों की टकराहट के व्याख्याकार इस्लाम और उससे संघर्षरत समूह के बीच टकराहट की बात करते हैं। वैसे यह व्याख्या हर समाज में उन समूहों को शक्ति पहुंचाती है जो आतंकवाद के धार्मिक पक्ष को जोड़ते हैं किंतु वहीं वे समूह भी प्रभावी हैं जो आतंकवाद को संस्कृति और धर्म से अलग हटकर देखना चाहते है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को धर्म के आधार पर संचालित मानना बहुत उपयोगी नहीं है। इस बीच वे सब तर्क जो राष्ट्र राज्यों के व्यापार, आर्थिक हित और विशेषकर तेल से जुड़े है यह याद दिलाने के लिए पर्याप्त है कि मात्र धर्म के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की व्याख्या काफी नहीं है।

IV

आतंकवाद के फलस्वरूप 2001-2002 में सबसे गंभीर परिणाम तो उन देशों पर हैं जिनकी अर्थव्यवस्था नाजुक है और पिछले लंबे समय से आर्थिक गतिविधियां लगातार कम होती जा रही हैं। इन घटनाओं ने व्यापार को सीमित किया है और नई प्राथमिकताओं ने उन्हें और अधिक पीछे कर दिया है। विकासशील देशों में स्थितियां और भी अधिक भयावह है क्योंकि यहां आर्थिक अभाव अन्य कई स्थितियों को जन्म देते है, किंतु संकटकालीन स्थितियों में विशेषकर यदि राज्य के अस्तित्व से वे प्रश्न जुड़े है तो राष्ट्रीय सुरक्षा और अस्तित्व के प्रश्न सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो जाते है और उसमें यदि आर्थिक गतिविधियां पिछड़ भी जाएं तो अपने अस्तित्व के प्रश्न से अधिक तो वे कभी नहीं हो सकते है। भारत की स्थिति भी इससे अलग नहीं है। यों आर्थिक स्थितियों की लंबी अवहेलना संभव नहीं है।

संकटकालीन स्थितियों में सुरक्षा के मामले सर्वोच्च हो जाते है। इस प्रश्न पर कोई भी अभाव रुचिकर नहीं माना जाता है। किंतु यह अवसर इस बात के महत्व को तो कम नहीं करता कि हमारे यहां लगातार अभाव है और उन अभावों के चलते हुए हम लगातार पिछड़ते जाते है।

यह अवसर हमें एक और दृष्टि से सोचने को बाध्य करता है कि सामरिक शस्त्रों की दृष्टि से जो बड़े व्यापारी देश है वे एक बार फिर अपनी उच्च सैन्य क्षमताओं का परिचय दे चुके है। वैसे वे अपने भंडारों को एक बार खाली कर चुके है, क्योंकि 1990-91 में खाड़ी युद्ध के बाद यह फिर एक अवसर था जबकि वे अपने शस्त्रों का प्रयोग कर सके। वैसे वर्तमान में सैन्य सामग्री का भंडारण मुख्य समस्या है। इसलिए यह अवसर मुख्य सैन्य व्यापारी देश अमेरिका के लिए ऐसा अवसर तो था ही। हमारे जैसे देश के लिए यह एक ऐसा अवसर रहा जब हम नए सैन्य आयुधों की क्षमता से प्रभावित है और खरीदने के लिए तत्पर भी। ऐसी स्थिति में सैन्य व्यापार से जुड़े देशों के लिए यह अपने प्रभुत्व के साथ-साथ अपने व्यापार को बढ़ाने का भी अच्छा अवसर है। ऐसे राष्ट्रों के संपन्न होने के अवसर और हमारे आर्थिक रूप से पिछड़े रह जाने के अवसर लगभग एक साथ ही आते है।

V

आतंकवादी संगठनों का संचालन बहुत लंबे समय तक एक क्रांतिकारी रोमांच से जुड़ा रहा है, किंतु पिछले कुछ समय से यह विचार एक सैन्य उद्योग और मादक द्रव्यों के व्यापार से जुड़ गया है। इस दृष्टि से 1970 के आतंकवादी समूह मूलतः वैचारिक रूझानों से जुड़े थे, इसके विपरीत वर्तमान में जो समूह है वे

धार्मिक कट्टरवाद से जुड़े होने के साथ-साथ आर्थिक हितों से भी जुड़े हैं। यही नहीं ये वे समूह भी हैं जो शस्त्रों के व्यापार से भी गहरा संबंध रखते है। इन समूहों को सुविधा यह भी है कि वे चाहे जिस तरह से शस्त्रों की खरीद कर लें वे विभिन्न देशों की सरकारों की तरह नियमों से बंधे नहीं हैं और न ही उनके उपयोग को लेकर उनको कोई चिंता है। उनके पास विनाश के प्रचुर साधन हैं और आर्थिक संसाधनों की प्रचुरता भी जिससे वे कोई भी निर्णय लेने के लिए न केवल स्वतंत्र है वरन् उसे व्यवहार में बदलने की क्षमता भी रखते है।

ये समूह उन सब सरकारों के लिए लगातार खतरा बने रहते है जो संवैधानिक तो है किंतु जिनके सामाजिक और आर्थिक आधार बहुत ही कमजोर हैं।

आतंकवाद उन सब सरकारों को और भी प्रभावहीन बना देता है जो आतंकवाद से संघर्ष के लिए अपने नियमों को तो कठोर बना देती है—जो यह आभास देते हैं कि सरकार मजबूत है, किंतु नियमों के प्रभावी क्रियान्वयन के अभाव में उनकी अपनी कमजोरी लगातार स्पष्ट होती रहती है। हमारे यहां अपनी सरकार का प्रदर्शन भी इसी दुविधा से ग्रस्त है।